Emerging Trends in Education [ Vol. 4 - No. 1 . pp 78-89 ]

# शिक्षक सशक्तिकरण– अपेक्षित प्रवीणताएँ एवं युक्तियाँ

के0पी0 पाण्डेय*

शिक्षा चाहे जिस रूप में दी जाए उसका एकमात्र उद्देश्य है, व्यक्ति एवं उसके माध्यम से समाज, राष्ट्र एवं वैश्विक सन्दर्भो का रूपान्तरण एवं सबलीकरण। आज के वैश्विक युग में शिक्षा की यह अवधारणा अत्यन्त जटिल एवं चुनौतीपूर्ण बनती जा रही है। ज्ञान, कौशल, अभिवृत्ति एवं मूल्य जो मानव जीवन के बुनियादी आधार एवं निधि हैं उनकी सम्प्राप्ति, उनका परिष्करण एवं विकास शिक्षा द्वारा निष्पन्न होने वाले रूपान्तरण (ट्रान्सफार्मेशन) अर्थात् सबलीकरण का केन्द्रवर्ती बिन्दु होता है। अनेक चिन्तक, शिक्षाशास्त्री एवं समाज सुधारक शिक्षा के माध्यम से इन आयामों में अभीष्ट परिवर्तन की रूपरेखा का खाका प्रस्तुत करते रहे हैं। गांधी जी की बुनियादी तालीम की संकल्पना, श्री अरविन्द की समवेत शिक्षण (इन्टिग्रल एजुकेशन) की अवधारणा, टैगोर की प्रकृति प्रदत्त नैसर्गिक जीवन की पूर्णता से अभिसिंचित 'शान्ति निकेतन' का अभिनव प्रयोग तथा भारतीय जीवन पद्धति के आदिकाल से प्रतिष्ठित 'गुरूकुल' का प्रतिमान शिक्षा को उपकरण के रूप में अंगीकृत करते हुए रूपान्तरण एवं सबलीकरण की इस प्रक्रिया को द्रुत एवं प्रभावी बनाने के कतिपय अन्यतम उदाहरण हैं। इन सभी में शिक्षक के प्रभाव–पुंज की अहम् भूमिका रेखाकिंत की गयी है।

शिक्षा की इन व्यवस्थाओं के तहत प्रशिक्षण एवं अनुबन्धन तथा अनुदेशन एवं मतारोपण के सापेक्ष शिक्षण को वरीयता दी जाती है। इसीलिए शिक्षण एवं शिक्षक की प्रभाविता का मुद्दा किसी देश विशेष से जुड़ा विशुद्ध रूप से 'देशज' न होकर एक 'सार्वभौम' महत्व का विषय बना हुआ है। पिछले 6–7 दशकों में शिक्षण की प्रभाविता में शिक्षण–विधि की संशैक्षिकी (पेडागाँजी ऑफ मेथड) पर विशेष बल दिया गया ज़बकि विगत कुछ वर्षो से परिचर्या अथवा देख रेख केन्द्रित संशैक्षिकी (पेडागाँजी ऑफ केयरिंग) के पैमाने को आत्मसात् करते हुए नवीन मानकों की परिकल्पना मुखर हुई है। प्रस्तुत आलेख में शिक्षक के सशक्तिकरण के मुद्दों को शिक्षण की प्रभाविता के सम्प्रत्ययों से जोड़कर आधुनिक परिप्रेक्ष्य में व्याख्यायित किया गया है तथा इस सम्बन्ध में शिक्षक की प्रभाविता के निर्धारकों एवं प्रभावी शिक्षक बनाने की युक्तियों पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है जिससे 21वीं सदी के दो महत्वपूर्ण करकों–वैश्वीकरण एवं सूचना प्रौद्योगिकी से प्रभावित सन्दर्भों के आलोक में शिक्षक सशक्तिकरण की गतिविधियों को शिक्षा एवं शिक्षण की परिस्थितियों में निरन्तर निर्माणशील नई जमीन मिल सके तथा उनसे जुड़ी विवशता को पहचानने, समझने एवं आकलित करने हेतु उपयोगी एवं प्रेरक आयाम विकसित हो सके। इस लक्ष्य को दृष्टिगत रखकर अध्यापक शिक्षा के महाविद्यालयों के तहत शोध, परीक्षण एवं पाठ्यक्रमों के साधकत्व से प्रसंगौचित्य के आधार पर नई संरचनाएं एवं प्रतिमान ढूँढने एवं

* पूर्व कुलपति, म0गां0 काशी विद्यापीठ एवं निदेशक, शेपा, वाराणसी।

अपनाए जाने की कार्य संस्कृति पनप सकेगी। आइए, सर्वप्रथम इस बिन्दु पर विचार केन्द्रित करें कि शिक्षक–सशक्तिकरण का सन्दर्भ आज क्यों महत्पूर्ण बन गया है तथा उसे कारगर रूप देने के लिए किस प्रकार की युक्तियाँ एवं रचना कौशल 21वीं सदी के सन्दर्भों में हमारी संस्थाओं में प्रभावी साबित हो सकती हैं।

## शिक्षक सशक्तिकरण एवं वर्तमान संन्दर्भ

आज से लगभग दो सौ वर्ष पूर्व से ही शिक्षा में वर्तमान परिवर्तन का मुद्दा चर्चा का विषय रहा है। इस प्रतिमान के तहत शिक्षा को शिक्षक–केन्द्रित व्यवस्था का स्वरूप न देकर उसे छात्र केन्द्रित बनाये जाने की पहल की गयी। तथापि पूरी शिक्षा व्यवस्था में छात्र की पहल को अपेक्षित महत्व नहीं प्राप्त हो सका है। एक आदर्श शिक्षा व्यवस्था में शिक्षक की भूमिका अधिगम परिस्थितियों के व्यवस्थापक की होती है जिसमें छात्र की प्रकृति, प्रवृत्ति, प्रविष्टि व्यवहार एवं प्रवर्तन–सामर्थ्य के अनुरूप व्यवस्थाएं रची एवं गढ़ी जाती हैं। उक्त व्यवस्था में शिक्षक द्वारा एक निदेशक या निर्देशक की भूमिका के बजाय एक समर्थन–प्रदायक की भूमिका अपनाए जाने के प्रति विशेष आग्रह होता है। विद्यार्थी की भूमिका अन्वेशक, खोजी एवं ऐसे पथिक की होती है जो आगे की जमीन स्वयं अपनी पहल पर ढूँढ़ता एवं तलाशता है।

प्रश्न यह है कि शिक्षा एवं शिक्षण में इस प्रतिमान को अपेक्षित गति एवं दिशा प्रदान करने की दृष्टि से शिक्षक को कैसे सबल बनाया जाए जिससे उसके द्वारा अपनायी जाने वाली संगत रणनीति एवं युक्तियों में प्रभाविता का अंश साफ नजर आए। इधर वैश्वीकरण एवं सूचना प्रौद्योगिकी के प्रभाव में शिक्षण–अधिगम के सन्दर्भों में जो बदलाव आ रहा है, उससे जुड़ी चुनौतियों, विसंगतियों एवं नवीन अपेक्षाओं को कल्पनाशील, विकासशील एवं प्रभावकारी युक्तियों द्वारा किस रूप में निपटा जाए तथा हर स्तर के शिक्षक के लिए इस दृष्टि से सबलीकरण सुनिश्चित करने के प्रशिक्षण प्रारूप एवं योजनाएँ क्या हों, इस पर गहराई से विचार करने की आवश्यता है।

## शिक्षक सशक्तिकरण से तात्पर्य

शिक्षक सशक्तिकरण वह प्रक्रिया है जिसमें शिक्षा के परिवर्तित सन्दर्भो की अपेक्षाओं के अनुरूप शिक्षक की सामर्थ्य, कल्पना, योग्यता एवं नियत्रंण, प्रबन्धन, स्व–मूल्यांकन, स्व–संयमन की क्षमता संवर्धित की जाती है। सशक्तिकरण की इस प्रक्रिया के प्रसंगौचित्य पर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तब विशेष ध्यान गया है जब शिक्षण तथा अधिगम के रचनावादी उपागमों का प्रभाव सामने आया तथा इसके प्रभाव में स्व–संयमित अधिगम (सेल्फ रेगुलेटेड लर्निंग) की अवधारणा का अभ्युदय हुआ है। अधिगम की बहु–आयामी एवं बहु–मार्गीय (मल्टी–चैनेलिंग लर्निंग) प्रकृति का महत्व समझने के बाद इधर शिक्षण की प्रभाविता एवं शिक्षक–सबलीकरण की प्रक्रियाओं में नया आयाम जुड़ा है जिसे अपेक्षित सूक्ष्मता एवं सावधानीपूर्वक विश्लेषित करने की जरूरत है।

शिक्षक–सशक्तिकरण का मुद्दा शिक्षक की सामर्थ्य, प्रवीणता एवं उसकी प्रभाविता से प्रत्यक्षतः सम्बन्धित है। शिक्षण के नए प्रतिमान को स्वीकार किए जाने तथा उसकी क्रियान्विति

सुनिश्चित किए जाने के क्रम में सशक्त या सबल शिक्षक किसे कहा जायेगा? उसकी सशक्तिकरण की प्रक्रिया को निरन्तर दृढ़ एवं प्रभावी बनाए रखने की क्या युक्तियाँ हों, इन मुद्दों पर आधारित प्रश्न एवं उत्तर दोनों ही नए परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने होंगे।

इस दृष्टि से विगत दो दशकों में शैक्षिक शोधों के माध्यम से नई अन्तर्दृष्टियाँ विकसित हुई हैं। सन् 1960 ई0 के दशक में कोलमैन तथा क्रिस्टोफर जेक्सन के शोधों के बाद यह प्रकाश में आया कि छात्रों के अधिगम को प्रभावित करने में विद्यालयों की भूमिका चाहे हो अथवा नहीं, शिक्षक का अवदान अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। सन् 1970 ई0 में प्रभावी शिक्षण–व्यवहारों के अध्ययन के क्रम में यह बात और स्पष्ट रूप से उजागर हुई कि अप्रभावी विद्यालयों में भी शिक्षक की भूमिका अधिगम को प्रभावित करने में क्रान्तिक महत्व रखती है। जरे ब्रोफी तथा टामस गुड ने सन् 1986 ई0 में सैकड़ो शोधों की समीक्षा के आधार पर यह घोषित किया कि यह भ्रम कि छात्रों के अधिगम में अध्यापक कोई महत्व नहीं रखते, असत्य है।

तदुपरान्त सैन्डर्स तथा हॉर्न (1994), राइट, हॉर्न तथा सैन्डर्स (1997) ने अपने अध्ययनों में यह पाया कि छात्रों की निष्पत्ति पर कक्षा–अध्यापक कहीं ज्यादा प्रभाव डालते हैं। लगभग 100 विद्यालयों के एक लाख से भी अधिक छात्रों के उपलब्धि–प्राप्तांकों के विश्लेषण के पश्चात् उनका यह निष्कर्ष था कि 'छात्रों के अधिगम को प्रभावित करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक शिक्षक होता है। इसके अतिरिक्त यह भी प्रकाश में आया है कि शिक्षकों की प्रभाविता के परास में भी भारी अन्तर होता है। इसका तात्कालिक निहितार्थ यह है कि शिक्षा को समुन्नत बनाने की दृष्टि से अन्य कारकों के सापेक्ष शिक्षक की प्रभाविता को संवर्धित करने पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाए। प्रभावी शिक्षक कक्षा में संरचनात्मक विजातीयता के बावजूद सभी प्रकार के उपलब्धि स्तर वाले छात्रों के लिए प्रभावी होते हैं। इसके विपरीत, यदि शिक्षक अप्रभावी है तो उसके संरक्षण में पढ़ने वाले छात्र शैक्षिक दृष्टि से अपर्याप्त प्रगति प्रदर्शित कर सकते हैं चाहे वे कितनी ही एक जैसी या भिन्न शैक्षिक निष्पत्ति की पृष्ठभूमि रखतें हों (राइट तथा अन्य, 1997)।

उक्त शोध साक्ष्यों के आधार पर शिक्षा के बहुचर्चित प्रतिमान परिवर्तन (पैराडाइम शिफ्ट) के तहत जिसमें शिक्षक–केन्द्रित शिक्षण के स्थान पर अधिगमकर्ता केन्द्रित शिक्षण की व्यवस्था को अपनाये जाने की आम संस्तुति है, शिक्षक के सबलीकरण का मुद्दा सामयिक महत्व रखता है। इसमें शिक्षक की बदली हुई भूमिका को मजबूत बनाने पर जोर होगा जिसमें वह सृजनात्मक, कल्पनाशील, उन्मुक्त, गतिशील एवं सामर्थ्यवान शैक्षणिक व्यवस्था का रचनाकार होगा तथा जिस प्रणाली में आत्म–अनुदेशन, स्व–शिक्षण, स्व–मूल्यांकन तथा स्व–प्रमाणीकरण की अभिनव कार्य प्रणाली विकसित हो सकेगी।

## शिक्षक–सशक्तिकरण के आयाम

इस परिप्रेक्ष्य में शिक्षक–सबलीकरण को एक बहु–आयामी संकल्पना का स्वरूप देना आवश्यक होगा। इसके अन्तर्गत सबलीकरण (इम्पावरमेण्ट) के चार आयामों को रेखांकित किया

जा सकता है जिन्हें आगे की तालिका में दर्शाया गया है। इस अवधारणा में शोधों द्वारा चिन्हित कतिपय महत्वपूर्ण क्षमताओं या प्रवीणताओं (काम्पीटेन्सिज) का भी उल्लेख किया गया है:

**तालिका :1– शिक्षक सशक्तिकरण से सम्बन्धित क्षमताएँ एवं उनके आयाम**

| अभिवृत्ति एवं मूल्य आधारित | व्यवहार आधारित | विषय–आधारित | शैली–आधारित |
|---|---|---|---|
| आत्म सामर्थ्य | नियोजन | सामान्य ज्ञान | संगठित व्यवहार |
| नियंत्रण की संस्थिति | अनुदेशन | विषय ज्ञान | गतिशीलता |
| शिक्षक प्रत्याशा | सम्प्रेषण | | नम्यता |
| शिक्षक उत्साह | प्रबन्धन | | स्फूर्ति एवं स्वीकरण |
| | मूल्यांकन | | सर्जनशीलता |

## अभिवृत्ति एवं मूल्य आधारित प्रवीणताएँ

शिक्षक सशक्तिकरण का वह आयाम जो अभिवृत्ति एवं मूल्य पक्ष पर आधारित है तथा जिसे भावात्मक प्रज्ञा (इमोशनल इन्टिलिजेन्स) के सम्प्रत्यय से जोड़ा जा सकता है, शिक्षक की प्रभाविता निर्धारण का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष है। इसमें आत्म सामर्थ्य, नियंत्रण की संस्थिति, प्रत्याशा तथा उत्साह ये सभी पक्ष शिक्षक की मनोवृत्ति, उसके द्वारा धारित मूल्य एवं स्वप्रबन्धन से जुड़ी प्रवीणताएँ हैं। सन् 1977 ई0 एवं लगभग एक दशक बाद सन् 1986 ई0 में बान्डुरा ने आत्म सामर्थ्य (सेल्फ एफिकेसी) की अवधारणा को परिभाषित करते हुए यह बताया था कि यह किसी कार्य को निष्पादित करने हेतु तत्सम्बन्धी कार्य–योजना को क्रियान्वित कर सकने की आत्म–प्रत्यक्षीकृत क्षमता है। ऐसे व्यक्ति में यह विश्वास प्रबल होता है कि किसी कार्य विशेष के सफल सम्पादन हेतु उसमें क्षमता है। इसके विपरीत, जिन व्यक्तियों में इस आत्म–सामर्थ्य का अभाव होता है, वे ऐसा नही महसूस करते। इसी के अनुरूप शैक्षणिक आत्म–सामर्थ्य से तात्पर्य है, शिक्षकों की यह मान्यता कि वे छात्रों के निष्पादन को प्रभावित कर सकते हैं (ऐशटन, 1984, डेम्बो तथा गिबसन् 1985 तथा ग्रीनबुड एवं अन्य, 1990)। इन शोधों के जरिए यह ज्ञात हुआ है कि आत्म–सामर्थ्य के धनी शिक्षकों में अधोलिखित प्रकार की मान्यताएँ एवं विश्वास प्रबल होते हैं :

1. अच्छे शिक्षक अपने विद्यार्थियों की घरेलू परिवेश से जुड़ी परिस्थितियों के विषम होने पर भी उन पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं।
2. सतत एवं कठोर प्रयास के माध्यम से वे अत्यन्त दुर्गम्य छात्रों तक अपनी पहुँच बढ़ा सकते हैं (ऐशटन एवं वेब, 1986)।

यहाँ ध्यान रखना होगा कि पहले प्रकार की मान्यता को शैक्षणिक सामर्थ्य तथा दूसरे प्रकार की मान्यता को वैयक्तिक शैक्षिक–सामर्थ्य की संज्ञा दी जा सकती है। ऐशटन (1984) ने अपने अध्ययनों में यह पाया कि जिन शिक्षकों में 'शैक्षणिक–सामर्थ्य' विद्यमान होता है वे अन्य के

सापेक्ष अपनी कक्षाओं में भिन्न प्रकार से सोचते एवं कार्य करते हैं। उनके शोधों से यह उजागर हुआ है कि शैक्षणिक आत्म–सामर्थ्य रखने वाले शिक्षकों में आठ प्रकार की व्यवहारगत विलक्षणताएँ दृष्टिगत होती हैं जो इस प्रकार हैं –

- वे शिक्षण को कुंठा जनक क्रिया न मानकर एक सार्थक एवं परितोषदायिनी क्रिया के रूप में लेते हैं।
- वे छात्रों की असफलता के बजाय सफलता की आशा रखते हैं तथा ऐसा कर दिखाते हैं।
- वे छात्र–असफलता के लिए अपने अन्दर झाँकते है न कि छात्रों पर दोषारोपण करते हैं।
- वे सफलता प्राप्ति हेतु महत्वपूर्ण क्रियाओं जिनमें उद्देश्य निर्धारण एवं उपयुक्त रणनीति विकसित करना शामिल है, उनकी उपेक्षा करने के बजाय उन पर विशेष ध्यान देते हैं।
- वे अपने छात्रों के बारे में गिला–शिकवा करने के बजाय अपने तथा अपने छात्रों के प्रति सकारात्मक रूख बनाए रखते हैं।
- वे शैक्षणिक परिस्थितियों पर आमतौर से नियन्त्रण रखने एवं प्रभावी होने का भाव रखते हैं।
- वे अपने शैक्षणिक उद्देश्यों को विद्यार्थियों के साथ संवाद एवं प्रतिभाग के माध्यम से तय करते हैं।
- वे अपने विद्यार्थियों की अधिकाधिक उपलब्धि सुनिश्चित करते हैं, उनका उच्च शैक्षिक स्तर बनाए रखते हैं, उनके बारे में स्पष्ट प्रत्याशाएँ अभिव्यक्त करते हैं तथा उन्हें संगत कार्यो में संलिप्त रखते हैं।

## नियंत्रण की संस्थिति (लोकस ऑफ कन्ट्रोल)

नियंत्रण की संस्थिति (लोकस ऑफ कन्ट्रोल) व्यक्तित्व से जुड़ा वह पक्ष है जिसके आधार पर व्यक्ति अपने कार्य के परिणामों की व्याख्या वाह्य या आभ्यन्तरिक कारकों पर आरोपित करता है। इस प्रकार नियंत्रण की संस्थिति दो प्रकार की होती है। प्रथम, वह जिसमें व्यक्ति अपने कार्य के परिणामों को भाग्य, संयोग, प्रबन्धक या किसी अन्य व्यक्ति पर आरोपित करता है। द्वितीय, वह जिसमें व्यक्ति अपने कार्य के परिणामों को अपने प्रयास, अपनी युक्ति, रणनीति या कार्य पद्धति पर आरोपित करता है। शोधों के आधार पर यह साक्ष्य प्राप्त हुआ है कि प्रभावी या सशक्त शिक्षकों में दूसरे प्रकार के नियंत्रण की संस्थिति अर्थात् आभ्यन्तरिकता (इन्टरनीलीटी) विद्यमान होती है। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि प्रभावी शिक्षक अपने शिक्षण कार्य की सफलता अथवा असफलता को अपने प्रयासों, शिक्षण विधियों एवं स्वयं पर आरोपित करते हैं न कि व्यवस्था, छात्रों, व्यवस्था से जुड़ी नीतियों पर।

इस सम्बन्ध में मरे तथा स्टैबलर (1974) द्वारा किये गए अध्ययनों के निष्कर्ष विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उन्होंनें अपने शोधों में यह पाया कि नियंत्रण की आभ्यन्तरिक संस्थिति–धारी शिक्षक उन शिक्षकों के सापेक्ष अपने छात्रों में अधिक प्रगति सुनिश्चित कर लेते हैं जिनके नियंत्रण की संस्थिति वाह्य होती है। इसके अलावा यह भी देखा गया कि नियंत्रण की

आभ्यन्तरिक संस्थिति वाले शिक्षक अपनी व्यावसायिक क्षमता की दृष्टि से बुझ जाने (बर्न आउट) की स्थिति में भी प्रायः कम ही आ पाते हैं। सन् 1981 ई0 में मेडवे ने एक अन्य अध्ययन में यह पाया कि वे शिक्षक जिनकी नियंत्रण की संस्थिति आभ्यन्तरिक होती है, प्रायः कम तनाव महसूस करते हैं सापेक्ष उनके जिनमें नियंत्रण की संस्थिति वाह्य होती है।

## शिक्षक प्रत्याशा (टीचर एक्सपेक्टेन्सी)

जहाँ आत्म सामर्थ्य का सम्बन्ध शिक्षक की अपनी प्रभाविता या सफल होने की योग्यता के बारे में प्रत्यक्षीकरण से है, वहाँ शिक्षक प्रत्याशा शिक्षक की वह मान्यता है जिसके आधार पर वह छात्रों के सफल होने की उम्मीद प्रगट करता है। गुड (1987) तथा गुड एवं ब्रुफी (1991) ने उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाले छात्रों के बारे में शिक्षकों द्वारा सम्प्रेषित प्रत्याशाओं के प्रभावों का आकलन करते हुए यह देखा कि उच्च स्तरीय उपलब्धि वाले छात्रों के सापेक्ष वे निम्नस्तरीय उपलब्धि वाले छात्रों के प्रति निम्नांकित रूप से व्यवहार प्रदर्शित करते हैं:

- ऐसे छात्रों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर देने में वे सापेक्षतः कम प्रतीक्षा समय देते हैं।
- ऐसे छात्रों की सापेक्षतः अधिक आलोचना करते हैं।
- ऐसे छात्रों द्वारा दिए गए उत्तरों के प्रति प्रायः अधिक उदासीनता का बरताव करते हैं।
- ऐसे छात्रों के प्रति कम ध्यान देते हैं।
- इन छात्रों से कम ही पूछताछ करते हैं।
- इन छात्रों से प्राइवेट तौर पर कम ही अन्तर्क्रियात्मक सम्बन्ध बनाते हैं।
- इन छात्रों को वे अपने से दूर बैठाते है तथा
- उनसे प्रायः कम ही अपेक्षा रखते हैं।

इन शोधों से यह संकेत मिलता है कि शिक्षकों की प्रभाविता बढ़ाने की दृष्टि से उनकी सकारात्मक प्रत्याशाओं की प्रवृत्ति में प्रोत्साहन लाना परमावश्यक है। इस प्रकार शिक्षकों के सबलीकरण हेतु ऐसी प्रत्याशाओं को छात्रों में आरोपित करने का प्रशिक्षण एवं अभ्यास का प्रावधान शिक्षण संस्थानों को करना चाहिए।

## शिक्षक–उत्साह (टीचर इनथ्यूजियाज्म)

यह शिक्षक की उस अभिवृत्ति द्वारा अभिव्यक्त होता है जिससे वह अपनी पहल पर शिक्षण हेतु रूचि लेता है तथा शिक्षण की प्रक्रिया को सहज, रोचक एवं सजीव बना देता है। यह शिक्षण का महत्वपूर्ण भावात्मक अंश है। सेंडरबर्ग तथा क्लार्क (1990) ने अपने शोध–अध्ययनों में यह पाया कि जिन शिक्षकों में यह अंश (अर्थात् शिक्षक–उत्साह) प्रचुर मात्रा में होता है, वे ऊर्जावान, अभिप्रेरित, समर्पित मिशनरी भाव रखने वाले, संवेदनशील एवं सूक्ष्मग्राही होते हैं। शिक्षण व्यवसाय के लिए अपेक्षित प्रवीणता के स्तर को समुन्नत बनाने में शिक्षक के व्यक्तित्व का यह पक्ष अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

## व्यवहार आधारित प्रवीणताएँ

शिक्षक सशक्तिकरण का दूसरा आयाम है– व्यवहार आधारित प्रवीणताएँ। इसके अन्तर्गत शिक्षक में जो प्रवीणताएँ अपेक्षित हैं, उन्हें मुख्य रूप से नियोजन, अनुदेशन, सम्प्रेषण, प्रबन्धन तथा मूल्यांकन की संज्ञा दी गयी है।

शिक्षण की प्रभाविता सुनिश्चित करने की दृष्टि से नियोजन को एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रवीणता के रूप में स्वीकार किया गया है। इसके तहत पाठों का नियोजन प्रमुख घटक है। पाठों के नियोजन हेतु पाठ के उद्देश्यों का निर्धारण, पाठ में अभिप्रेरणा बनाए रखने हेतु अनुप्रयोग में लाने वाली युक्तियों, विषय–वस्तु, शिक्षण विधि एवं विविध क्रियाओं का उल्लेख, सहायक सामग्री एवं श्रव्य–दृश्य साधन, सारांश एवं पुनर्विलोकन तथा दत्तकार्य आदि का स्पष्ट रूप से विवरण देना पड़ता है। इसके अन्तर्गत मूल्यांकन को भी शामिल किया जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि नियोजन वह प्रवीणता है जिसके माध्यम से शिक्षक यह तय करता है कि शिक्षण के समय उसे किसी क्रिया विशेष में क्या करना है तथा उसमें क्यों तथा किस रूप में संलिप्त होना है।

'अनुदेशन' की प्रवीणता व्यवहार आधारित सभी प्रवीणताओं में प्रमुख है। यह शिक्षक द्वारा प्रयुक्त ऐसी विधियों एवं क्रियाओं की परिसूचक है जिनकी सहायता से छात्र को अधिगम की ओर प्रवृत्त किया जाता है। अनुदेशनात्मक प्रक्रिया के तहत विद्यार्थी को अधिगम क्रियाओं में संलिप्त रखना, उसे प्रश्न पूछने, उनके उत्तर ढूँढ़ने, प्रतिपुष्टि प्रदान करने, समस्या की पहचान करने, समस्या–समाधान की ओर उन्मुख होने तथा विद्यार्थी की आवश्यकता के अनुरूप पूरी परिस्थिति को बनाए रखने की क्रियाएं निष्पन्न होती हैं।

'सम्प्रेषण' वह प्रवीणता है जिसके अन्तर्गत वाचिक एवं अवाचिक दोनों ही माध्यमों से व्यवहार व्यक्त होता है। इसमें सूचनाओं, संदेशों, तथ्यों एवं विचारों का आदान–प्रदान होता है। बेलाक (1966) ने चार प्रकार की वाचिक सम्प्रेषण की प्रवीणताओं का उल्लेख किया है जो प्रभावी शिक्षक के शिक्षण व्यवहार में प्रायः दृष्टिगत होती हैं। वे हैंः संरचना के लिए सम्प्रेषण, प्रश्न पूछना, छात्र–अनुक्रियाओं के प्रति शिक्षक की अनुक्रिया तथा स्वतः स्फूर्त रूप में प्रतिक्रिया व्यक्त करना। इस प्रवीणता को व्याख्यायित करने हेतु गिनाट (1973) ने 'समरूपी सम्प्रेषण' (कांग्रुएन्ट कम्युनिकेशन) पद का प्रयोग किया है। इसके तहत ऐसी भाषा का बोध होता है जो छात्रों की परिस्थिति को स्वीकार करता है।

स्मुक तथा स्मुक (1992) ने यह बताया है कि प्रभावी सम्प्रेषण के तहत अधोलिखित विशेषताएँ पायी जाती हैंः–

- सरल एवं बोधगम्य रूप से स्पष्ट कथन।
- अपने व्यवहार का विवरण देना।
- अपनी भावना को स्पष्ट करना।

- विद्यार्थियों के स्तर पर बात कहना।
- विद्यार्थी द्वारा कही गयी बात को अपने शब्दों में कहना।
- दूसरे के व्यवहार का विवरण देना।
- अपनी कही गयी बात के बारे में यह जायजा लेना कि विद्यार्थियों तक वह पहुँच गयी है अथवा नहीं।

अवाचिक सम्प्रेषण के अन्तर्गत हाव–भाव, सहज रूप में दूसरों की ओर बढ़ना, परस्पर सम्बन्ध स्थापित करना तथा भावनाओं के स्तर पर स्वीकृति आदि शामिल किए जाते हैं। यह सम्प्रेषण प्रायः वाचिक सम्प्रेषण से सम्पृक्त होकर प्रगट होता है। प्रशिक्षण संस्थानों में छात्राध्यापकों के व्यवहार में वाचिक एवं अवाचिक दोनों ही प्रकार की सम्प्रेषण–प्रवीणताओं के विकसित करने पर बल देना चाहिए।

'प्रबन्धन' की प्रवीणता से तात्पर्य है शिक्षण–अधिगम की परिस्थिति में छात्रों को उपयोगी एवं सार्थक गतिविधियों में संलिप्त रखना जिससे ऐसे अधिगम–अनुभवों की अधिकाधिक सम्प्राप्ति सम्भव हो सके जो शैक्षणिक उद्देश्यों से संगति रखते हैं। इस प्रवीणता का प्रमुख अंश संगत क्रियाओं में छात्रों की अन्तर्भाविता संवर्धित करने तथा असंगत क्रियाओं पर अंकुश लगाते हुए प्रभावी अनुश्रवण एवं संयमन के माध्यम से अधिगम जनित उपलब्धियों को बढ़ावा देने से सम्बन्धित होता है। इसके अन्तर्गत प्रतिभाग एवं सहयोग आधारित कार्य–योजनाओं का क्रियान्वयन भी अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है।

मूल्यांकन की प्रवीणता प्रभावी शिक्षण से अविच्छिन्न रूप में जुड़ी हुई है। यह मूल्यांकन सतत एवं व्यापक रूप में निष्पन्न होना चाहिए जिससे विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास को प्रथमता मिल सके। प्रत्येक शिक्षक में मूल्यांकन की प्रवीणता के दो स्वरूप उसके व्यवहार–स्वरूप के माध्यम से अभिव्यक्त होने चाहिए। प्रथम, निर्माणात्मक मूल्यांकन (फारमेटिव इवेलुएशन) जो प्रक्रियात्मक पक्षों, उनकी प्रभाविता एवं अभीष्ट प्रभावोत्पादकता से सम्बन्धित है। द्वितीय, संकलनात्मक मूल्यांकन (समेटिव इवेलुएशन) जो छात्रों की सत्रान्त में उपलब्धियों एवं निष्पत्तियों से सम्बन्धित है। प्रथम प्रकार का मूल्यांकन सतत रूप में परीक्षणों, प्रेक्षणों एवं अन्य साक्ष्यों के आधार पर निष्पन्न होता है जबकि द्वितीय प्रकार का मूल्यांकन विद्यार्थी की एक अवधि विशेष में दृष्टिगत सम्प्राप्तियों का सर्वांगीण रूप में आकलन करने के प्रति आग्रह रखता है।

मूल्यांकन की इन दोनों ही प्रकार की विधाओं में मानक सन्दर्भित (नार्म रेफरेन्स्ड) तथा निकष सन्दर्भित (क्राइटेरियन रेफरेन्स्ड) परीक्षणों का प्रयोग उनकी प्रासंगिकता के आधार पर कुशलता पूर्वक कर सकने की प्रवीणता के रूप में भी आमतौर पर चर्चित विषय है। इसके लिए सेवापूर्व एवं सेवाकालीन प्रशिक्षण की अवधि में विशेष रूप से प्रयोगात्मक सत्रों द्वारा अपेक्षित दक्षता विकसित करने पर जोर देना चाहिए। इससे मूल्यांकन प्रक्रिया की विश्वसनीयता, वैधता, उपादेयता एवं यथा–तथ्यता में अभिवृद्धि सुनिश्चित हो सकेगी जो परिवर्तित शैक्षणिक प्रतिमान की एक मुख्य अपेक्षा भी है।

## विषय–आधारित प्रवीणताएँ

प्रभावी शिक्षण के अन्तर्गत शिक्षक को केवल यही जानकारी नहीं होनी चाहिए कि 'कैसे पढ़ाया जाए'?अपितु उसे यह संज्ञान भी होना चाहिए कि उसे किसी विषय या प्रकरण में 'क्या पढ़ाना है', इस संज्ञान के दो पक्ष महत्वपूर्ण हैं: सामान्य ज्ञान तथा विषय ज्ञान। प्रभावी शिक्षक अपने विषय की जानकारी के साथ सामान्य ज्ञान में भी प्रवीणता रखता है जिससे वह विविध प्रकरणों की सुस्पष्ट व्याख्या करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रसंगों एवं सन्दर्भों की सहायता सहज रूप में ले लेता है। इससे उसकी विषयगत पेचीदगी एवं सूक्ष्मताओं का विवरण विश्वसनीय ढंग से प्रस्तुत कर सकने में मदद मिलती है।

इस प्रकार साहित्य एवं भाषा के शिक्षक को विज्ञान एवं तकनालॉजी की जानकारी तथा विज्ञान एवं तकनालॉजी के शिक्षक को सामाजिक अध्ययन–इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र एवं वाणिज्य तथा भाषा एवं साहित्य की सामान्य जानकारी होने से अपने विषय के विविध मुद्दों का व्यवस्थित चित्रण करने, अपनी सम्प्रेषणशीलता बढ़ाने एवं भावात्मक तथा ज्ञानात्मक आधार को प्रबलित करने में प्रवाहपूर्णता आती है।

विषय ज्ञान के अन्तर्गत विषय से सम्बन्धित अद्यतन सूचनाओं, तथ्यों, व्याख्याओं, परिकल्पनाओं, अवधारणाओं, सिद्धान्तों एवं सामान्य नियमों की जानकारी शामिल है। विषय की इस गहराई तक पहुँचने के लिए शिक्षक को अपने शिक्षण–विषय के साहित्य से परिचय प्राप्त करने तथा उसमें अपेक्षित सूक्ष्मता एवं अवबोध विकसित करते रहने की आवश्यकता होती है।

## शैली आधारित प्रवीणताएँ

शिक्षक की शैली आधारित प्रवीणताओं से तात्पर्य है उसकी उस पहल से जिसके माध्यम से वह विषय–वस्तु एवं विद्यार्थी में सम्बन्ध कायम कर लेता है। शोधों के आधार पर टकमैन (1974) ने पाँच ऐसी प्रवीणताओं का उल्लेख किया है जो शिक्षक की शिक्षण–शैली को व्यक्त करती हैं। वे हैं : संगठित व्यवहार, गतिशीलता, नम्यता, स्फूर्ति एवं स्वीकरण तथा सर्जनशीलता।

संगठित व्यवहार की शैली अपनाए जाने पर शिक्षण में व्यवस्था, क्रमबद्धता, आत्म विश्वास, नियंत्रण तथा सोद्देश्यता स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। शिक्षक अपनी सारी शिक्षण–क्रिया को उद्देश्यों के अनुरूप नियोजित एवं संगठित करता है जिससे शिक्षण के तहत प्रभाविता पक्ष का इष्टतम रूप में समावेश होता है।

गतिशीलता के अन्तर्गत शिक्षक अपने प्रभावी तेवर, सजीवता, स्वतंत्रता तथा चामत्कारिक प्रदर्शन द्वारा विलक्षण ऊर्जा, उत्साह, शक्ति एवं जादुई कलाकारिता का परिचय देता है जिससे उसके प्रभाव का आभा–मण्डल विद्यार्थियों को अपनी ओर सहज ही खींच लेता है। उसकी अभिव्यक्ति कला मंच पर प्रदर्शित अभिनेता के व्यवहार जैसी आकर्षक एवं प्रभावी

होती है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इस प्रकार की अभिव्यक्ति शैली से शिक्षण में विद्यार्थियों की रूचि, अन्तर्भाविता एवं संलिप्तता अधिक समय तक बनी रहती है।

'नम्यता' से तात्पर्य है शिक्षण–व्यवहार में संवेदनशीलता, सूक्ष्मग्राहिता, प्रस्तुति का वैविध्य एवं विद्यार्थियों की जरूरतों के मुताबिक पूरे शिक्षण–अभिगम परिवेश की संरचना को बदलते रहने की तत्परता एवं प्रवाहपूर्णता। इससे अधिगम की परिस्थिति नैसर्गिक, उन्मुक्त एवं अन्तर्क्रियात्मक ढाँचे में परिवर्तित हो जाती है जिससे विद्यार्थी अपनी पहल पर नई नई बातें तथा राहें ढूँढ लेता है।

**स्फूर्ति एवं स्वीकरण** के अन्तर्गत शिक्षक की प्रभावकारिता का आधार एक दूसरे के महत्व को जानने, समझने एवं स्वीकार करने एवं समर्थन–प्रदायी गतिविधियों के अपनाए जाने की ओर प्रवृत्त होता है। शिक्षक एक मानवतावादी उपागम के पोषक एवं संवर्धक की भूमिका में रहता है। वह अपने विद्यार्थियों की देखरेख उसी प्रकार करने के लिए आतुर होता है जैसे माता–पिता या अभिभावक अपने पाल्यों के प्रति प्रदर्शित करते हैं। इस अभिव्यक्ति–शैली में समरूपी सम्प्रेषण (कांग्रुएण्ट कम्यूनिकेशन) अर्थात् विद्यार्थी की जिस प्रकार की जरूरत या प्रत्याशा है उसके अनुरूप वाचिक या अवाचिक प्रतिपुष्टि प्रदान करने की सहजता पाई जाती है।

**सर्जनशीलता** की अभिव्यंजना में एक घिसी–पिटी लीक पर चलने के बजाय नए–नए मार्ग ढूँढने, नए मानक एवं प्रतिमान गढ़ने तथा नए विचारों के सृजन के प्रति विशेष आग्रह होता है। शिक्षक की अभिव्यक्ति शैली में परम्परा निर्वाह की अपेक्षा एक नया क्षितिज ढूँढने एवं नई चुनौतियों का सामना करने का संकल्प मुखर होता है। इससे शिक्षण–अधिगम का परिवेश अन्वेषणात्मक या खोजी (डिस्कवरर) की भूमिका में रूपान्तरित हो जाता है तथा हर विद्यार्थी सक्रिय रूप से प्रतिभाग करने हेतु अपनी उपलब्धियों का नवीनतम आधार ढूँढ लेता है।

पूर्वोल्लिखित चारों आयामों से सम्बन्धित ये कुल सोलह प्रकार की प्रवीणताएँ (काम्पिटेन्सीज) जिनका शोध–साक्ष्यों से समर्थन भी प्राप्त है, 21 वीं सदी के शिक्षक की सशक्तिकरण की प्रक्रिया को प्रबल आधार प्रदान कर सकती हैं। इस दृष्टि से अध्यापक–शिक्षा की प्रशिक्षण व्यवस्थाओं एवं उसके प्रारूपों में अपेक्षित स्तर का बदलाव एवं रूपान्तरण लाने की आवश्यकता से इनकार नहीं किया जा सकता। अध्यापक–शिक्षा के पाठ्क्रमों में सिद्धान्त, व्यवहार एवं अनुभव–आधारित गतिविधियों तथा क्रियाकलापों के अन्तर्गत इन प्रवीणताओं का विकास प्रमुख मुद्दा होना चाहिए। अध्यापक शिक्षा परिषद् दिल्ली द्वारा प्रवर्तित 'नवीन अध्यापक शिक्षा पाठ्क्रम परिप्रेक्ष्य' (2005) तथा उसके अनुरूप गठित 'पाठ्क्रम निर्माण समिति' (2005) के माध्यम से इन व्यवस्थाओं के क्रान्तिक महत्व को समझते हुए प्रत्येक विश्वविद्यालय, उच्चीकृत अध्यापक शिक्षा के संस्थान, शिक्षा महाविद्यालय एवं इसी प्रकार की इतर अध्यापक प्रशिक्षण संस्था का यह दायित्व बनता है कि वे शिक्षक सबलीकरण की प्रक्रिया को गतिशील एवं

ठोस स्वरूप प्रदान करें।

## युक्तियाँ

इन प्रवीणताओं का अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रमों द्वारा इष्टतम् विकास सुनिश्चित करने की दिशा में हमें अपनी संकल्प–शक्ति (विल पावर) तथा पथ शक्ति (वे–पावर) दोनों ही तत्वों को सबल एवं प्रभावी बनाना होगा। सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की युक्तियों को आत्मसात् करना जिसमें 'निरन्तर विकास' के पथ को प्रशस्त बनाना मुख्य मुद्दा रहता है, इस दृष्टि से अत्यन्त उपादेय एवं सटीक होगा। इस क्रम में व्यवस्था परक सोच, सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन, क्रियात्मक–अनुसंधान की प्रणाली, मानव–संसाधन विकास, दीर्घ–कालिक नियोजन पर आधारित परिप्रेक्ष्य एवं प्रभावी नेतृत्व को अध्यापक–शिक्षा की संस्थाओं के रूपान्तरण का उपकरण बनाना होगा।

इधर आम रूप से चर्चित सकारात्मक–चिन्तन परक उपागम को भी शिक्षक–सशक्तिकरण की युक्तियाँ में महत्वपूर्ण स्थान देना होगा। इस उपागम के तहत चतुःअंशीय प्रतिमान को जिसे अंग्रेजी के वर्ण 'डी' से जोड़कर '4डी' मॉडल कहा जाता है, शिक्षक के सशक्तिकरण हेतु विविध कार्यक्रमों में व्यवहारिक रूप से लागू किया जा सकता है। यह मॉडल हैः डिस्कवर, ड्रीम, डिज़ाइन तथा डेलिवर। डिस्कवर से तात्पर्य है प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रतिभाग करने वाले प्रशिक्षुओं के सकारात्मक एवं नकारात्मक पक्षों को जानना, समझना एवं छान–बीन करना, प्रशिक्षण के परिवेश में निहित सम्भावनाओं की परख करना तथा प्रशिक्षकों का अपनी सोच, कल्पना, जीवन दर्शन, दृष्टि एवं उपलब्धिओं के बारें में आत्मान्वेषण। इसके आधार पर दूसरे 'डी' (ड्रीम) की ओर बढ़ने से हमें अपनी व्यवस्था की भावी दिशा, उसके भावी विकास की सम्भावना एवं गन्तव्य का स्पष्ट चित्र बन जाता है जिससे पूरी संस्था को गतिमान किया जा सकता है। तीसरा 'डी' (डिज़ाइन) एक ऐसे अभिकल्प प्रस्तुत करने से सम्बन्धित है जिसके माध्यम से संस्था की विकास–यात्रा, उसकी प्रगति एवं उपलब्ध्यिों का ग्राफ निर्मित होता है। इसके अन्तर्गत दृश्य एवं अदृश्य, प्रत्यक्ष एवं परोक्ष दोनों ही प्रकार के कारकों पर नजर रखनी पड़ती है जिससे अपेक्षित अभिकल्प के क्रियान्वयन का आधार प्रबल बन सके। इसलिए उक्त प्रतिमान के अन्तिम 'डी' को (डेलिवर) अर्थात क्रियान्विति के नाम से अभिहित किया गया है। इसके तहत क्रिया–योजनाओं, सहयोग आधारित गतिविधियों तथा व्यक्तिगत एवं समूह स्तर की लघु–योजनाओं को प्रोत्साहित किया जाता है जिसके लिए क्रियात्मक अनुसन्धान की पद्धति अत्यन्त प्रभावी मानी गयी है।

यहाँ ध्यान रखना होगा कि शिक्षक–सबलीकरण की प्रक्रिया में '4डी' मॉडल को अपनाने का अर्थ होगा पहले दो 'डी' (डिसकवर एवं ड्रीम) के तहत संस्था की अपनी छवि को पहचानना, उसे निखारना एवं विस्तारित करना जबकि बाद के दो 'डी' (डिजाइन एवं डेलिवरी) के अन्तर्गत अपनी संस्था के सदस्यों द्वारा ऐसे विकल्पों का चयन आवश्यक माना जाएगा जो

संस्था के मूलभूत उद्देश्यों के आलोक में उसे अपेक्षित ऊँचाई देने में समर्थ हों। इस मॉडल को लागू करने के लिए अपनी संस्था के अतीत से जुड़ी गौरवशाली उपलब्धियों को आधार बनाते हुए वर्तमान में विद्यमान सम्भावनाओं का इष्टतम् रूप में उपयोजन करना संस्था की रणनीति का आवश्यक अंग होना चाहिए।

तभी डेलर्स रिपोर्ट में इंगित इक्कीसवीं शती के चार स्तम्भों–सीखने के लिए सीखना (ज्ञान योग), कर्म के लिए सीखना (कर्म योग), सभी के साथ सहयोग के लिए सीखना (वसुधैव कुटुबकम्) तथा अपनी पूर्णता के लिए सीखना (पुरूषम्महान्त) का साधकत्त्व प्राप्त करने तथा शिक्षक–सशक्तिकरण हेतु प्रस्तुत आलेख में वर्णित प्रवीणताओं को व्यवहारिक रूप देने में आशातीत सफलता के आसार बढ़ाए जा सकते हैं।

## सन्दर्भित ग्रन्थ :


- मारजानो, राबर्ट जे0 तथा अन्य (2001), *क्लासरूम इन्सट्रक्सन दैट वर्क्स,* मैकरिल सीडी पब्लिकेशन।
- डेलर्स, जेक्स (1996), *लर्निंग द ट्रेजर विदिनः* यूनेस्को।
- आर्निस्टाइन, एलेन सी (1995), *टीचिंग–थ्योरी इन्टु प्रैक्टिस*–एलेन एण्ड बेनर।
- अन्वेषिका (2002), *शिक्षक शिक्षा की भारतीय पत्रिका,* दिसम्बर।
- पारीक, उदय (2004), *अण्डरस्टैंडिग आर्गेनाइजेशनल बिहेवियर, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।*
- पाण्डेय, के0 पी0 (2005), *शिक्षा के दार्शनिक एवं सामाजिक आधारः* विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी।
- मुखोपाध्याय, एम0 (2005), *टोटल क्वालिटी मैनेजमेण्ट इन एजुकेशनः* नीपा, दिल्ली।